18

स्वास्थ्य देखभाल क्षेत्र में समाज कार्य

* *अशोक सरकार,*

प्रस्तावना

समुदाय की स्वास्थ्य समस्याओं को कुछ कारणात्मक अभिकर्ताओं (कारकों) और व्यक्तियों के बीच अंतःक्रियाओं के परिणाम के रूप में देखा जाता है जिनका माध्यम पर्यावरणी स्थितियाँ होती हैं। दूसरे शब्दों में, जनसंख्या विस्फोट, बेरोज़गारी, गरीबी, अज्ञानता, वृद्धावस्था, रहन-सहन की अस्वच्छ स्थितियाँ, खराब आवास (घर), खराब पोषण, आहार संबंधी असंगत (परस्पर विरोधी) आदतें, सफाई सुविधाओं का निम्न स्तर, सुरक्षित पेय जल का अभाव इत्यादि के संदर्भ में सामाजिक पद्धति की अपक्रिया खराब स्वास्थ्य के कारण हैं। इस प्रकार, यह माना जाता है कि खराब स्वास्थ्य सामाजिक विसंतुलन का लक्षण मात्र है। आयुर्विज्ञान ने यह माना है कि रोग का ठीक होना या अच्छा स्वास्थ्य औषधि के अनुप्रयोग का परिणाम है। कई सामाजिक वैज्ञानिकों का मानना है कि यह गलतफहमी है कि स्वास्थ्य का संबंध उपचार से है जबकि यह अच्छे स्वास्थ्य की पूर्वशर्त नहीं है। प्रो. इमराना कादिर मानते हैं कि लोगों की सजगता, प्रबल (प्रभावी) वर्गों की संस्कृति व शक्ति (सत्ता) स्वास्थ्य की संकल्पना को प्रभावित करती हैं और स्वास्थ्य समस्याओं को नियंत्रित करने के लिए रास्ता बनाती हैं।

इस तरह यह स्पष्ट है कि सामाजिक शक्तियाँ या कारक जनसमुदाय के स्वास्थ्य के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं। समाज कार्य के क्षेत्र में, स्वास्थ्य में सामाजिक कारकों को किस प्रकार मान्यता मिली, इसका एक विशिष्ट इतिहास है। इस संबंध में सबसे पहले, 1880 के आसपास इग्लैण्ड में प्रयास किया गया जब शरण स्थल (आश्रम) के लिए काम करने वाले स्वयंसेवियों के समूह ने अस्पताल से छुट्टी प्राप्त रोगियों के घरों के दौरे करने शुरू किए। 1895 में, इग्लैण्ड में सर

* *डॉ. अशोक सरकार, विश्व भारती श्री निकेतन, पश्चिम बंगाल*

चार्ल्स लॉक की चैरिटेबल अस्पतालों द्वारा दी जाने वाले ड्रग्स के दुरुपयोग को रोकने के लिए लेडी अल्मोना द्वारा रोगियों के घरों में दौरे किए जाने के संबंध में सिफारिश ने चिकित्सा समाज कार्य को प्रारंभ करने के लिए मार्ग प्रशस्त किया। सन् 1900 के दौरान संयुक्त राज्य अमेरिका में, नर्सों ने अस्पताल से छुट्टी प्राप्त रोगियों को गृह-स्तर की देखभाल प्रदान करने के लिए घरों के दौरे करने शुरू किए। इससे स्वास्थ्य में सामाजिक कारकों का मूल्य सामने आया। (पता चला), 1902 में, डा. चार्ल्स एमरखान ने, बीमारी में सामाजिक पहलुओं के महत्व का मूल्यांकन किया। उनका मत था कि चिकित्सा के विद्यार्थियों को धर्मार्थ (चैरिटी) या एजेंसियों में स्वयंसेवियों के रूप में काम करना चाहिए और रोगियों की सामाजिक-आर्थिक व भावात्मक स्थितियों का अध्ययन करना चाहिए। वस्तुतः 1905 में, जब डॉ. रिचर्ड सी. केबोट ने बोस्टन में मैसेच्यूसेरस जनरल अस्पताल में चिकित्सा समाज कार्य विभाग स्थापित किया, तभी स्वास्थ्य में सामाजिक कारकों के वास्तविक महत्व को समाज कार्य व्यवसाय में औपचारिक रूप से स्वीकार किया गया। इसके बाद से ही स्वास्थ्य देखभाल की गुणवत्ता को बेहतर बनाने, बीमारी व उपचार से जुड़े सामाजिक कारकों को समझने और व्यापक रोगी देखभाल में सामुदायिक संसाधनों का उपयोग करने के लिए संयुक्त राज्य अमेरिका के विभिन्न अस्पतालों में प्रशिक्षित समाज कार्यकर्ताओं की नियुक्ति की गई! भारत में, स्वास्थ्य देखभाल में प्रथम समाज कार्यकर्ता 1946 में मुम्बई के जे.जे. अस्पताल में और फिर उसके बाद 1950 में दिल्ली के लेडी इर्विन अस्पताल में रखा गया। इस अध्याय में स्वास्थ्य देखभाल क्षेत्र में समाज कार्य करने के लिए अपेक्षित विभिन्न मुद्दों को समझने का प्रयास किया गया है।

स्वास्थ्य और स्वास्थ्य देखभाल के अर्थ

स्वास्थ्य

हमारे समाज़ में 'स्वास्थ्य' को अधिकांशतः नज़रअंदाज किया जाता है, स्वास्थ्य के प्रति हम ध्यान नहीं देते और जब तक स्वास्थ्य थोड़ा बहुत (आंशिक रूप से) क्षतिग्रस्त नहीं होता तब तक हम स्वास्थ्य के महत्व को पूरी तरह नहीं समझ पाते। पारंपरिक रूप से, संकीर्ण अर्थ में 'रोग का अभाव' ही स्वास्थ्य की परिभाषा है। विभिन्न शब्दकोशों में 'स्वास्थ्य' के अर्थ प्रस्तुत किए गए हैं, ये अर्थ परम्परागत

संकल्पना की तुलना में बेहतर हैं। वेबस्टर शब्दकोश के अनुसार 'स्वास्थ्य शरीर, मन या आत्मा के तंदरूस्त (ठीक-ठाक) होने, विशेष रूप से शारीरिक रोग या पीड़ा से मुक्त होने की स्थिति है।' ऑक्सफोर्ड अंग्रेजी शब्दकोश के अनुसार 'शरीर या मन का तंदरूस्त होना स्वास्थ्य है; वह स्थिति जिसमें इसके कार्य उचित रूप से और सक्षमतापूर्वक किए जाते हैं।'

विज्ञान की उन्नति से कुछ समय में स्वास्थ्य की संकल्पना व्यक्तिगत सरोकार से हटकर विश्वव्यापी सामाजिक लक्ष्य के रूप में विकसित हुई है। ये परिवर्तनशील संकल्पनाएँ हैं जैव-चिकित्सा संकल्पना, पारिस्थितिक संकल्पना, मनो-सामाजिक संकल्पना, समग्र संकल्पना इत्यादि। जैव-चिकित्सा संकल्पना में, यदि व्यक्ति रोग मुक्त है, उसे कोई रोग नहीं है तो उसे स्वस्थ माना जाता है। इसके अंतर्गत मानव शरीर को एक मशीन के रूप में देखा गया और मशीन के अयोग्य (दुर्बल) होने का परिणाम रोग होता है। डॉक्टर इस मशीन की मरम्मत करता है और औषधि (दवा खाना) उसका अंतिम सुझाव होता है। परिस्थिति विज्ञानियों ने स्वास्थ्य को मनुष्यों और उनके पर्यावरण के बीच गतिक संतुलन के रूप में परिभाषित किया है और इन दोनों कारकों के बीच सही तालमेल का न होना अर्थात् कुसमायोजन बीमारी है। मनो-सामाजिक संकल्पना में स्वास्थ्य संबद्ध व्यक्तियों के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक कारकों द्वारा प्रभावित होता है। समग्र संकल्पना ऊपर वर्णित तीनों संकल्पनाओं का संगुटीकरण (मिश्रण - conglomeration) है। इसके अनुसार उद्योग, कृषि, पशु पालन, आवास, शिक्षा, लोक निर्माण, संचार जैसे समाज के सभी क्षेत्र स्वास्थ्य पर प्रभाव डालते हैं।

विश्व स्वास्थ्य संगठन (World Health Organisation – WHO) द्वारा दी गई 'स्वास्थ्य की परिभाषा सर्वमान्य है और उसका परिप्रेक्ष्य भी व्यापक है। विश्व स्वास्थ्य संगठन (1948) के अनुसार 'स्वास्थ्य वह स्थिति है जब व्यक्ति शारीरिक, मानसिक व सामाजिक तीनों रूपों से स्वस्थ होता है। केवल रोग का न होना ही स्वास्थ्य नहीं कहलाता।"

यहाँ शारीरिक घटक शरीर से, मानसिक घटक मन से और सामाजिक घटक समूचे सामाजिक-सांस्कृतिक पर्यावरण से संबंधित हैं। इसलिए, यह सुस्पष्ट है कि व्यक्ति के स्वास्थ्य को आकार देने व उसे परिभाषित करने में इन सभी क्षेत्रों

के कारकों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। हालाँकि अर्थ के संदर्भ में देखें तो विश्व स्वास्थ्य संगठन की परिभाषा सकारात्मक है, लेकिन फिर भी कई शिक्षाविदों या शोधकर्ताओं द्वारा इसकी आलोचना की गई है। उदाहरण के लिए, प्रो. इमराना कादिर का (सोशल एक्शन, जुलाई-सितम्बर, 1985) मत है कि यह भाषा वास्तविकता की बजाए आदर्श पर केन्द्रित है क्योंकि इसमें पूर्ण (निरपेक्ष) की धारणा को स्वीकार किया गया है अर्थात् इसमें सामाजिक पर्यावरण के साथ स्वास्थ्य का संबंध कैसा है इनकी जाँच-पड़ताल करने की बजाए व्यक्ति को 'पूर्ण रूप से स्वस्थ होने' पर बल दिया गया है। इस परिभाषा में इस तथ्य को भी नज़रअंदाज किया गया है कि स्वास्थ्य के विभिन्न स्तर होते हैं और यह पूर्ण मात्रा (या गुणवत्ता) नहीं हो सकता। कई व्यक्तियों का मानना है कि विश्व स्वास्थ्य संगठन की परिभाषा अप्रासंगिक या असंगत है क्योंकि विश्व में कोई भी व्यक्ति शारीरिक, मनोवैज्ञानिक और सामाजिक रूप से संपूर्ण नहीं है। यदि हम इस परिभाषा को स्वीकार कर लेते हैं तो इसके अनुसार हम सभी बीमार हैं।

उपर्युक्त सीमाओं के बावजूद, विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा दी गई स्वास्थ्य की परिभाषा मानक और सकारात्मक है और इसमें जनसामान्य की अभिलाषाओं को निरूपित करने का प्रयास किया गया है। प्रो. कादिर का कथन है कि व्यक्तियों के शारीरिक और मानसिक स्तर का उल्लेख करने के अलावा स्वास्थ्य की व्यापक संकल्पना में अन्तर्निहित सामाजिक आयाम होने चाहिए, एक वर्ग द्वारा दूसरे वर्ग का शोषण किए जाने की झलक (चित्रण), इस शोषण के विरुद्ध शोषित वर्ग का संघर्ष और समाज के पुनःनिर्माण के लिए उनके सजग व सामूहिक प्रयास का उल्लेख भी होना चाहिए।

स्वास्थ्य देखभाल

विश्व स्वास्थ्य संगठन यह मानता है कि स्वास्थ्य एक मूल (मौलिक) मानव अधिकार है। इस अधिकार को प्राप्त करने के लिए स्वास्थ्य की देखभाल अनिवार्य है। 'स्वास्थ्य' अपेक्षाकृत व्यापक संकल्पना है लेकिन 'स्वास्थ्य देखभाल' स्वास्थ्य का ही उपरूप है। (स्वास्थ्य) मूलभूत स्वच्छता सुविधाओं, सुरक्षित पेय जल, आवास स्थिति, पर्याप्त आहार, जीवन शैलियों, पर्यावरणीय खतरों, संचरणीय रोगों, चिकित्सा देखभाल के प्रावधान इत्यादि जैसे कई कारकों से प्रभावित होता है जबकि 'स्वास्थ्य देखभाल' से अभिप्राय है विभिन्न रोगों के कारण होने वाली

वेदना और पीड़ा व दुखदर्द को कम करने के लिए किसी भी संस्था (चाहे वह सरकारी संगठन हो या ग़ैर-सरकारी संगठन अर्थात प्राइवेट संस्थान) द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाएँ। स्वास्थ्य देखभाल, चिकित्सीय देखभाल नहीं है जो उन व्यक्तिगत सेवाओं को सूचित करती है जो डाक्टर द्वारा सीधे प्रदान की जाती हैं या डाक्टर के निर्देश पर दी जाती है। इस प्रकार, हम संक्षेप में कह सकते हैं कि चिकित्सा देखभाल स्वास्थ्य देखभाल का एक हिस्सा है और स्वास्थ्य देखभाल स्वास्थ्य का उपरूप है।

स्वास्थ्य देखभाल के तीन स्तर हैं। ये हैं प्राथमिक, द्वितीयक और तृतीयक स्तर। प्राथमिक स्तर की देखभाल में, व्यक्ति को राष्ट्रीय स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली के अन्तर्गत सेवा प्रदान की जाती है। उपकेन्द्र (Sub-centre — SC) और प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र (Primary Health Centre – PHC) बहुद्देशीय कार्यकर्ताओं, ग्राम स्वास्थ्य मार्गदर्शकों (गाइडों) और प्रशिक्षित दाइयों की मदद से सेवा प्रदानकर्ताओं की भूमिका अदा करते हैं। द्वितीयक स्तर में, थोड़ी जटिल समस्याओं पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है व उनके लिए सेवाएँ प्रदान की जाती हैं। ये सेवाएँ सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र (Community Health Centre – CHC) और जिला अस्पताल प्रदान करते हैं। तृतीयक स्तर की देखभाल से अभिप्राय उच्च स्तर की विशिष्ट सेवाओं से हैं जो मेडिकल कॉलेजों अस्पतालों, अखिल भारतीय संस्थानों जैसे क्षेत्रीय या शीर्ष संस्थाओं के माध्यम से प्रदान की जाती है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद स्वास्थ्य देखभाल सुविधा को बेहतर बनाने के लिए बहुत लगन व निष्ठा से प्रयास किए गए। इस तरह, स्वास्थ्य देखभाल प्रदान करने के उपागमों में क्रमिक विकास हुआ। सबसे पहले, व्यापक स्वास्थ्य देखभाल की संकल्पना को प्रस्तुत किया गया जो कि भोरे समिति (1946) की सिफारिशों से उभरी। इसमें एक निश्चित (निर्धारित) भौगोलिक क्षेत्र में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति को 'जीवन प्रारंभ होने से लेकर (कोरण) मृत्यु' तक एकीकृत निवारक, व्याधिशामक और संवर्धनात्मक स्वास्थ्य सेवाएँ प्रदान करने का सुझाव दिया गया। इसके परिणामस्वरूप उपकेन्द्रों और प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों का सृजन किया गया। स्वास्थ्य में दूसरी उपागम 1965 में 'मूलभूत स्वास्थ्य सेवाओं' के रूप में प्रारंभ (उद्भूत) हुई। 'इसे समन्वित, परिधीय और मध्यवर्ती स्वास्थ्य इकाइयों के रूप में देखा गया जो स्वास्थ्य के क्षेत्र से संबंधित अनिवार्य कार्य करने की क्षमता

रखती हैं। तीसरी उपागम 'प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल' के रूप में प्रतिपादित की गई। इसे 1978 में सोवियत संघ (यू.एस.एस.आर.) में अल्मा-अत्ता सम्मेलन में '2000 ई० तक सभी के लिए स्वास्थ्य' का लक्ष्य अर्जित करने के लिए घोषित किया गया। 'प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल एक अनिवार्य स्वास्थ्य देखभाल है जो सबको उपलब्ध व स्वीकार्य होनी चाहिए,जिसमें सभी की पूर्ण सहभागिता होनी चाहिए और ऐसी लागत वाली होनी चाहिए जिसे समुदाय व देश दोनों वहन कर सके।

डा. गौरीपाद दत्ता की राय है कि वर्ष 2000 आया और चला गया लेकिन घोषणा कार्यान्वित नहीं हुई। ऐसा प्रतीत होता है मानो यह विपरीत दिशा में आग्रह हो रही है। विकसित देशों की अभिवृत्ति (रवैये में) बदलाव अशुभ का संकेत है; स्वास्थ्य का एक वस्तु में परिवर्तित करके बहुराष्ट्र निगम विकासशील देशों को बाज़ार में जाल में फंसाने (शिकार बनाने) का प्रयास कर रहे हैं। हालाँकि, इस अत्यंत निराशाजनक स्थिति में एक आशा की किरण भी दृष्टिगत होती है। सन् 2000 में कोलकात्ता में आयोजित राष्ट्रीय स्वास्थ्य एसेम्बली (सभा) और 2001 में बांग्लादेश में आयोजित पीपुल्स हैल्थ एसेम्बली ने विश्व बैंक और उसके मित्र राष्ट्रों में इस अशुभ प्रयास का साफ शब्दों में विरोध किया। लगभग 94 से भी अधिक देशों ने 'सभी के लिए स्वास्थ्य - अब' के नारे के तले, अलमा अत्ता घोषणा को सफल बनाने की सहमति व्यक्त की।

व्यक्ति के रूप में रोगी की संकल्पना

ऑक्सफोर्ड अंग्रेजी शब्दकोश के अनुसार पेशेंट अर्थात रोगी शब्द से अभिप्राय ऐसे व्यक्ति से है जो डाक्टर (चाहे वह क्लिनिक में/अस्पताल में या घर/समुदाय में) की देखरेख में चिकित्सा-उपचार प्राप्त करता है। 'व्यक्ति' शब्द को एक मानव के रूप में देखा गया है जो एक अलग-अलग विशेषताओं वाला व्यक्ति है। इस प्रकार 'व्यक्ति के रूप में रोगी' में रोगी को बीमार व्यक्ति के बजाए एक ऐसे व्यक्ति के रूप में देखा गया है जो एक सामान्य व्यक्ति है और जो कई पारिवारिक और समाज कार्य कर सकता है। इन कार्यों में पारिवारिक मामलों से संबंधित निर्णय लेने में भाग लेना, परिवार की अर्थव्यवस्था और बच्चे की देखभाल से संबंधित दायित्व निभाना, परिवार के अन्य सदस्यों की मनो-सामाजिक समस्याओं को सुनना, उनके प्रति सहानुभूति प्रकट करना, दूसरों को सम्मान देना

व दूसरों से सम्मान लेना, सामुदायिक कल्याण के लिए एकता (भाईचारा) दर्शन इत्यादि कार्य शामिल हैं। चिकित्सा और मनो-सामाजिक कार्य के क्षेत्र में, यह शब्द चार प्रकार के व्यक्तियों — डाक्टर, परिवार के सदस्य, समुदाय के लोग और सामाजिक कार्यकर्ता के लिए महत्वपूर्ण है। अस्पताल के कर्मचारियों के जीवन में जो कई चीजें आम होती हैं जब रोगी को अस्पताल में भर्ती किया जाता है वहीं चीजें अक्सर रोगी के जीवन में भावात्मक संकट उत्पन्न करती हैं। दवाइयों की गंध, स्टाफ के अनुचित व्यवहार (अनुक्रिया), डॉक्टरों का रोगी को देखने न आना, वार्ड की अस्वच्छ स्थिति, भोजन का निम्न स्तर, अन्य रोगियों की बीमारियों (पीड़ाओं) और मृत्यु से उत्पन्न भय इत्यादि के फलस्वरूप रोगी अस्पताल के माहौल में अपने को ढाल नहीं सकता। इस तरह, डाक्टर को रोगी की बीमारी व्यक्ति की भूमिका को कम महत्व देते हुए उसके साथ व्यक्ति के भाँति व्यवहार करना चाहिए। लेकिन इसके विपरीत रोगी कई व्यक्तियों से कुछ उम्मीदें (अपेक्षताएँ) रखते हैं। वे चाहते हैं कि विशेषरूप से परिवार के सदस्य व पड़ोसी उनकी मनो-सामाजिक समस्याओं को समझें। उन्हें भावात्मक सहयोग प्रदान करें और रोगी समझ कर उन्हें अलग-थलग न कर दें। 'व्यक्ति के रूप में रोगी' समाज कार्यकर्ता के लिए भी महत्व रखता है। इसके अभ्यास द्वारा समाज कार्यकर्ता रोगी पर रोग का बोझ कम करने का प्रयास करता है। इस सदर्भ में, रोगी की बीमार भूमिका को ज्यादा महत्व दिए बिना समाज कार्यकर्ता उसे विभिन्न गतिविधियों में व्यस्त रखता है, उसे सम्मान देता है, रोग के अलावा जो उसकी अन्य समस्याएँ है उनको जान लेता है और उनके समाधान के लिए परामर्श सेवाएँ लेने का सुझाव देता है।

रोग और उनके उपचार में निहित सामाजिक और मनोवैज्ञानिक कारक

कई ऐसी स्थितियाँ आ जाती हैं जब चिकित्सा व्यावसायिक मनो-सामाजिक कारकों को महत्व देना जरूरी समझते हैं। यह एक स्वभाव विशेषता है। लेकिन सामाजिक वैज्ञानिक इससे सहमत नहीं हैं। उनका तर्क है कि ये कारक व्यक्तिगत स्वास्थ्य, स्वास्थ्य देखभाल और समुदाय के कल्याण को प्रभावित करते हैं। इसलिए रोग और उपचार पर उनके प्रभाव को समझने के लिए कुछ ही सामाजिक और मनोवैज्ञानिक कारकों की चर्चा आगे की गई है।

सामाजिक कारक

क) **निर्धनताः** कम आय, अप्रधान आहार, लम्बे समय से भूखमरी इत्यादि इसके परिणाम हैं। ये कुपोषण को जन्म देते हैं जो सभी रोगों के प्रति रोग निरोधक क्षमता को कम कर देता है।

शहरी क्षेत्र या ग्रामीण क्षेत्र में परिवार के कई लोग एक ही कमरे में गुजर बसर करते हैं। जब परिवार का कोई एक सदस्य किसी संचरणीय रोग (उदाहरण के लिए टी.बी. जैसे क्षयरोग) से ग्रस्त हो जाता है तो अन्य सदस्यों के साथ उसका निकट संपर्क होता है और इस तरह उनमें यह रोग आसानी से संचरित हो सकता है। हम यह भी मानते हैं कि गरीबी सफाई के अस्वच्छ पर्यावरणीय प्रबंध और खराब आवास का मूल कारण है, जो श्वसन संक्रमण, त्वचा संक्रमण, एन्थ्रोपोड, दुर्घटनाओं, रुग्णता व मृत्यु की उच्च दरों इत्यादि का मूल कारण है।

ख) **देशांतरण (एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाना):** समाज में लोगों को विभिन्न सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक प्रतिबंधों को भोगना पड़ता है यह उन्हीं का कारण व परिणाम दोनों ही है। ग्रामीण विशिष्ट वर्ग उच्च शिक्षा के लिए शहरों में आते हैं और परिवार की संपदा को बढ़ाते हुए बाद में शहरों में ही नौकरी करने लगते हैं। दूसरी ओर गरीब किसान और काश्तकार, भूमिहीन मज़दूर, सीमांत समूह और गरीब शिल्पकार बेरोज़गारी से बचने के लिए बड़े गाँवों, शहरों और नगरों में आकर बस जाते हैं। जहाँ तक स्वास्थ्य का प्रश्न है देशांतरण इसे बुरी तरह प्रभावित करता है। ग्रामीण-ग्रामीण या ग्रामीण-शहरी एकल पुरुष (अपेक्षाकृत निर्धन वर्ग) देशांतरण खतरनाक यौन व्यवहार के फलस्वरूप यौन संचरित रोगों, एच.आई.वी और एड्स के संचरण और संकुचन से संबद्ध है। ईंट के भट्ठे, भवन-निर्माण, फसल काटने, टाइलें बनाने, बेंत बॉस दस्तकारी इत्यादि में काम करने वाली प्रवासी महिलाओं के व्यवसायजनित स्वास्थ्य समस्याएँ होती हैं। प्रवासी महिलाओं को होने वाली इन स्वास्थ्य समस्याओं में बदन में दर्द, त्वचा पर जलन, धूप (गर्मी) में काम करने के कारण धूप ताम्रता (sun burn), श्वसन संबंधी समस्याएँ, काम करने की खराब स्थितियों के कारण एलर्जी, विदारण, मासिक धर्म में अत्यधिक रक्त प्रवाह इत्यादि शामिल हैं। प्रवासी

अपने साथ मलेरिया, टी.बी., पीलिया रोगों हानिकारक आदतों और इस तरह की अन्य समस्याओं का वहन भी करते हैं।

ग) **व्यक्तिगत आदतें:** प्रत्येक व्यक्ति की आदतों का उसके रोग पर प्रभाव पड़ता है। उदाहरण के लिए कुछ व्यक्तियों की खान-पान की आदतों को ही लीजिए। बहुत कम लोगों में दूध, दूध से बने पदार्थों को खरीदने का सामर्थ्य होता है। इन पदार्थों में विटामिन ए होता है। विटामिन ए शरीर में संक्रमण के प्रति प्रतिरोधक क्षमता बनाए रखने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण व अनिवार्य है। कभी-कभी लड़के व लड़कियों द्वारा पतले होने के लिए काफी समय तक स्वयं को भूखे रखना, या भूखे रहना भी एक खतरनाक प्रक्रिया है और यह स्वस्थ जीवन के लिए हानिकारक है। देर रात में भोजन करने या बहुत ज्यादा शराब पीने की आदत हालाँकि संक्रमण का प्रत्यक्ष कारण तो नहीं है लेकिन अप्रत्यक्ष रूप से संक्रमण के प्रति प्रतिरोधक क्षमता को कम करके ये कई रोगों के लिए मार्ग बनाती है।

घ) **अल्प बुद्धि, अल्प शिक्षा और व्यक्तिगत अज्ञानता:** इसके परिणामस्वरूप, कई लोग कुछ घातक बीमारियों के स्वरूप या कारणों से अवगत नहीं होते हैं और इसीलिए इनसे बचने के लिए एहतियाती उपाय नहीं अपनाते। उदाहरण के लिए, कभी-कभी लोग टी.बी. के रोगियों के साथ बहुत ज्यादा घुलमिल जाते हैं और नहीं जानते कि जब वह रोगी उनके मुँह पर खाँसता है तो वे उस रोगी के कीटाणुओं को साँस द्वारा अपने अंदर ले रहे हैं। इसी तरह, कई श्वसन-संक्रमण, आंतों के संक्रमण, एन्थ्रोपोड जन्म संक्रमण, पशुजन्य रोग और सतही संक्रमण (surface) (रोहें, टिटेनस, कुष्ठ, यौन संचरित रोग इत्यादि) निम्न शिक्षा और व्यक्ति की अज्ञानता के फलस्वरूप भी हो सकते हैं।

ङ) **काम की परिस्थितियाँ:** वे व्यक्ति जो अंधेरे, कम रोशनी वाले व ऐसे स्थानों पर काम करते हैं जहाँ वायु का आवागमन उचित नहीं होता वे आसानी से अंधेपन का शिकार हो जाते हैं। केवल यही नहीं बल्कि कभी काम का स्वरूप भी अंधेपन का कारण होता है। उदाहरण के लिए, बढ़ई गिरी, लौहार गिरी, पत्थर तोड़ना, छेनी से काटना, हथौड़ा चलाना, लकड़ी काटना

इत्यादि। काम करने की खराब परिस्थितियाँ, अंधेपन के अलावा कई अन्य बीमारियों को भी जन्म दे सकती हैं जैसे (hear exhaustion), (heat cramps), हिमदाह, वातमंजूषा (कैसान) रोग, व्यवसायजन्य बहरापन, श्वेतरक्तता, पूर्णरक्तकोशिकाहीनता, चोटें व दुर्घटनाएँ इत्यादि।

च) **सामाजिक कलंकः** टी.बी., कुष्ठ रोग, फाइलेरिया इत्यादि जैसे कई रोग रोगियों में शर्मनाक भावना या बदनामी होने की भावना पैदा करते हैं। हालाँकि इसका मुख्य कारण अस्वीकार किए जाने की भावना हो सकता है जो परिवार व समुदाय में रहने वाले लोगों के मन में हावी होता है। लोगों की धारणा है कि यदि वे इन रोगियों के साथ उठे-बैठेंगे व घुल-मिल कर रहेंगे तो उन्हें भी संक्रमण हो जाएगा। कार्य-स्थल पर अस्वीकृति के कारण पुरुषों को इसे ज्यादा झेलना पड़ता है। काम पर वापिस लौटने पर सबसे बड़ी चिंता होती है सहकर्मियों या प्राधिकारियों द्वारा अस्वीकार (बहिष्करण) किए जाने का भय। उनके मन में कई प्रश्न उठते हैं। क्या रोग के कारण उसे लोग हीन दृष्टि से देखेंगे? ऐसे अमैत्रीपूर्ण माहौल में वह काम कैसे कर पाएगा? हालाँकि महिला को भी यह सुनिश्चित नहीं होता है कि उसका पति का रिश्तेदार उसे स्वीकार करेंगे? भले ही यह सही है कि बहुत कम महिलाएँ ऐसी हैं जिनके पति वास्तव में उन्हें उनके रोग के कारण छोड़ देते हैं। अस्वीकृति या छोड़े जाने का भय अधिकांश महिलाओं के मन में प्रबल होता है। ऐसे तथ्य भी हमारे सामने आए हैं कि कभी-कभी रोगियों के रिश्तेदार ही सामाजिक कलंक के भय से उनसे अलग-थलग (दूर) हो जाते हैं।

छ) **सांस्कृतिक कारकः** जाति प्रथा के कम होने और पश्चिमी संस्कृतियों के प्रभावस्वरूप लोगों में घर से बाहर खाने पीने की आदतें विकसित हो गई हैं। शहरों व नगरों में लोग होटलों व रेस्टोरेंटों में अक्सर अल्पाहार या जलपान के लिए जाते हैं। अन्य जातियों के लोगों द्वारा बनाए गए आहार व पेय पदार्थों का सेवन करने में न तो उन्हें हिचकिचाहट होती है और न अन्य लोगों द्वारा इस्तेमाल किए गए बर्तनों में खाना परोसा जाना उन्हें बुरा ही लगता है। कई रोगी इन रेस्टोरेंटों में आते हैं और उनके द्वारा प्रयुक्त बर्तनों को अन्य लोगों द्वारा भी इस्तेमाल किया जाता है। होटलों या

रेस्टोरेंटों में इन खाने-पीने के बर्तनों को शायद ही कभी कीटाणुरहित किया जाता है। कभी-कभी तो वे पानी की भरी बाल्टी में इन गिलासों व प्यालों को मात्र डुबकी ही लगवाते हैं, बर्तनों की साफ-सफाई के लिए मात्र यही प्रक्रिया अपनाई जाती है। जब तक हम इन को कीटाणुरहित नहीं करते तब तक ये संक्रमण का स्रोत बने रहते हैं और कई बीमारियाँ फैला सकते हैं।

ज) **अन्य कारकः** ऊपर वर्णित पहलुओं के अतिरिक्त कई अन्य सामाजिक कारक भी हैं जो कई रोगों व उनके उपचार को भी प्रभावित करते हैं ये सामाजिक कारक हैं शहरीकरण और उद्योगीकरण, स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता व पहुँच, अन्य विश्वास और पारम्परिक मान्यताएँ, नशीले पदार्थों का व्यसन और मद्यव्यसन इत्यादि।

मनोवैज्ञानिक कारक

क) **भावात्मक समस्याः** विश्व में प्रत्येक व्यक्ति जीना चाहता है और अपनी उत्तरजीविता के लिए एहतियात बरतता है। लेकिन कुछ ऐसे रोगी होते हैं जिनमें 'जीने की इच्छा' प्रबल नहीं होती। अत्यधिक तकलीफों, दुखों व गहन भावना के कारण वे मौत के स्वागत को तैयार रहते हैं। इस प्रकार, ऐसा मन जो मृत्यु के साथ संबद्ध हो, वह शरीर को रोग के लिए तैयार करने में मदद करता है और बदले में, बीमारी इन दिशाओं में मन की गतिविधि को तीव्र करती है।

ख) **चिंताएँ व तनावः** प्रत्येक व्यक्ति रोजमर्रा के जीवन में इन्हें झेलता है। हालाँकि, प्रत्येक व्यक्ति बचपन से ही इन चिंताओं से बचने या इन्हें नियंत्रित करने के लिए विभिन्न क्रियाविधियाँ या तकनीकें विकसित कर लेता है लेकिन व्यक्ति इन्हें नियंत्रित करने के लिए अपने को बहुत अधिक गतिविधियों में उलझाते जाते हैं। व्यक्ति वयस्कावस्था में इन गतिविधियों या तकनीकों को स्थायी आदतें बना लेते हैं जिनके विरुद्ध वह बगावत नहीं कर सकते। इस प्रकार कई अलग-अलग व्यक्तिगत कारक हैं जो व्यक्ति के जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं, वे कभी-कभी वास्तविक जीवन की स्थिति में अत्यधिक परेशान हो जाते हैं और कई मनोवैज्ञानिक विसंगतियों को व्यक्त करते हैं।

ग) **घातक अभिवृत्तिः** लोग भाग्य पर भरोसा करते हैं और सोचते हैं कि सभी बीमारियों को भगवान नियंत्रित करेगा। इस अभिवृत्ति के कारण व्यक्ति निष्क्रिय और अकर्मण्य हो जाता है, अर्थात बीमारी का इलाज करने के लिए हाथ-पाँव नहीं मारता। यह व्यक्ति व समुदाय दोनों के लिए एक बाधा है और इससे रोगों की संभावना बढ़ जाती है।

स्वास्थ्य देखभाल दल (टीम) में समाज कार्यकर्ता की भूमिका

इक्कीसवीं शताब्दी में स्वास्थ्य देखभाल संगठनों में 'टीम-कार्य' शब्द ने एक आम स्थान बना लिया है। टीमों (दलों) को कार्य करने वाली महत्वपूर्ण इकाइयों के रूप में देखा जाता है और 'टीम कार्य' के संभावित फायदों को मान्यता व सराहना की जाती है। एकीकरण के स्तर के आधार पर टीम-कार्य को बहुविषयक, अंतःविषयक और पार (परा) विषयक जैसे शब्दों में श्रेणीबद्ध किया गया है। बहुविषयक टीम वर्क में अलग-अलग विषयों के विशेषज्ञ उपभोक्ता (client) के साथ संबद्ध होते हैं लेकिन प्रत्येक विशेषज्ञ अपने-अपने विषय की गतिविधियों के लिए जवाबदेह होता है। अन्तःविषयक में विभिन्न विषयों के बीच अंतःक्रिया की अपेक्षा की जाती है। संसाधन (विशेषज्ञ) व्यक्ति अलग-अलग काम करते हैं लेकिन वे समूह प्रयास के लिए कभी उत्तरदायी होते हैं। पराविषयक टीम वर्क में ये विशेषताएँ काफी हद तक होती हैं। अलग-अलग विषयों के प्रतिनिधि एक साथ काम करते हैं लेकिन केवल एक या दो टीम सदस्य ही वस्तुतः सेवाएँ प्रदान करते हैं। स्वास्थ्य देखभाल व्यवस्था में, चिकित्सा कार्यकर्ता अन्त-विषयक या पराविषयक टीम में कार्य करते हैं। डाक्टरी पेशे के लोग या मनोचिकित्सक, मेडिकल या मनोचिकित्सा का समाज कार्यकर्ता, क्लिनिकल मनोविज्ञानी, व्यावसायिक चिकित्सक (थैरेपिस्ट) प्रशिक्षित नर्स इत्यादि स्वास्थ्य देखभाल टीम के सदस्य होते हैं। इस टीम से जुड़े सामाजिक कार्यकर्ता के महत्वपूर्ण कार्य निम्नलिखित होते हैं:

क) वह रोग के बचपन और स्कूल में उसके निष्पादन, घरेलू परिस्थिति, परिवार में अन्तःव्यक्तिगत संबंधों, मनोलैंगिक (मनःकामुक) इतिहास, मनोवृत्तियों, शौक, रुचियों इत्यादि से संबंधित सामाजिक जानकारी प्राप्त करता है। वर्तमान परेशानियों (समस्याओं) के संदर्भ में रोगी की चिरस्थायी समस्याओं को समझा व जाना जा सके। समाज कार्यकर्ता द्वारा एकत्रित की गई

पिछली जानकारी और डाक्टर या मनोचिकित्सक की रिपोर्ट तथा मनोवैज्ञानिक के निष्कर्ष रोग का पता लगाने व उपचार की योजना बनाने में मददगार होते हैं।

ख) समाज कार्यकर्ता रोगियों और उनके परिवार के सदस्यों को बीमारी या रोग के बारे में जानकारी देता है; वह यह भी समझाता है कि यह रोग कितनी जल्दी-जल्दी या कब-कब हो सकता है, व्यक्तिगत या सामूहिक स्तर पर इसका क्या प्रभाव होगा और डाक्टरों द्वारा प्रस्तावित उपचार प्रक्रियाओं के बारे में भी बताता है।

ग) स्वास्थ्य देखभाल टीम के सदस्य के रूप में समाज कार्यकर्ता बेहतर सामाजिक सामंजस्य के लिए तरीका खोजने में परिवार व रोगी की सहायता कर सकता है। इस संबंध में वह भावात्मक समर्थन प्रदान करता है और नियोक्ता या शैक्षणिक संस्थान या परिवार के सदस्य या पड़ोसी के साथ काम करके पर्यावरण में बदलाव लाता है।

घ) कई बार, संसाधन के अभाव में रोगी के लिए उचित चिकित्सा या मनोचिकित्सा देखभाल प्राप्त करना कठिन हो जाता है। अतः समाज कार्यकर्ता गरीब रोगियों को धन, दवा, कपड़े या कृत्रिम अंग उपलब्ध कराने के लिए समुदाय के संसाधनों को एकत्रित करता है (मिलाता है) ताकि वे डाक्टर द्वारा दी गई सलाह के अनुसार अपने उपचार को जारी रख सकें। इसके अतिरिक्त, समाज कार्यकर्ता समुदाय में उपलब्ध ऐसी अन्य सामाजिक एजेंसियों के संपर्क में भी रहते हैं जो रोगियों को नियमित रूप से क्लिनिकों में भेजती हैं। यह सेवाओं के उचित समन्वय में सहायक होता है।

ङ) रोगियों को मनोरंजन सुविधाएँ, अपेक्षित जागरूकता और चिकित्सीय सुविधाएँ (आगतें) प्रदान करने के लिए समाज कार्यकर्ताओं द्वारा रोगियों व उनके परिवार के सदस्यों के साथ सामूहिक कार्य से संबद्ध गतिविधियाँ की जाती है। मनोचिकित्सा संस्थानों में सामूहिक कार्य को प्राथमिक गतिविधि के रूप में प्रयुक्त किए जाने वाला कार्य माना जाता है जहाँ दीर्घकालिक मामले होते हैं लेकिन केवल 24% समाज कार्यकर्ता इसे प्राथमिक कार्य मानते हैं (वर्मा 1991)। वास्तविकता यह है कि अधिकांश

मनोचिकित्सा विभाग अपनी सेवाएँ मुख्य रूप से ओ.पी.डी. (बाह्य रोगी विभाग) के जरिए प्रदान करते हैं। हालाँकि, बच्चों के साथ काम करते हुए सी जी सी (बाल मार्गदर्शन क्लिनिक Child Guidace Clinics) सामूहिक कार्य/थैरेपी पर विशेष बल देते हैं, बहुत ही कम सी.जी.सी. थैरेपी, परामर्श और शिक्षा के लिए रोगियों को शामिल करते हुए सामूहिक गतिविधियाँ आयोजित करते हैं। मनोचिकित्सा व्यवस्था के अतिरिक्त, समाज कार्यकर्ता विशेष रूप से संस्थागत स्वास्थ्य देखभाल सेवाओं के कार्यकर्ता सामूहिक कार्य विधि को नज़रअंदाज करते हैं।

च) समाज कार्यकर्ता रोगी के पुनर्वास (पुनःस्थापन) में सहायता करता है। स्वास्थ्य देखभाल में पुनर्वास रोगी की सामान्य जीवन में लौटने में या लंबी गंभीर बीमारी या क्षति के बाद जहाँ तक संभव हो उत्तम जीवन-शैली अर्जित करने में सहायता करने की प्रक्रिया है। यह पुनर्वास सामाजिक (पारिवारिक और सामाजिक संबंधों को पुनःस्थापित करना) या मनोवैज्ञानिक पुनर्वास (अपनी डारिया व आत्मविश्वास को पुनः प्राप्त करना) या व्यावसायिक पुनर्वास (जीविका अर्जित करने की क्षमता की वापसी) हो सकता है।

छ) समाज कार्यकर्ता के महत्वपूर्ण कार्यों में एक कार्य है परामर्श (संदर्भ) सेवाओं में मदद करना। परामर्श सेवा से अभिप्राय है रोगी को ऐसी एजेंसी या कार्यक्रम अथवा व्यावसायिक व्यक्ति के साथ संबद्ध करना जो रोगी को अपेक्षित सेवा प्रदान कर सकता है और करेगा। आयुर्विज्ञान व्यवस्था में, रोगी को क्लिनिक/पोलीक्लिनिक/नर्सिंग होम/अस्पताल में भेजा जा सकता है। मनोचिकित्सीय व्यवस्था में, रोगी को सी.जी.सी (यदि बच्चा है और उसे सहायता संबंधी समस्या है) या नशा छुड़ाने वाले केन्द्र (यदि नशा करता है या मद्यव्यसन है) या मनोचिकित्सीय विभाग (चिकित्सात्मक आगतों सुविधाओं से संबंधी और अधिक अवसरों के लिए) या मानसिक चिकित्सालय (पागलखाना) (ऐसे पुराने व गंभीर मानसिक रोगी जिन्हें शारीरिक उपचार की जरूरत है जो उपचार देने के लिए) भेजा जा सकता है। स्वास्थ्य देखभाल टीम के अन्य सदस्यों द्वारा कितने मामले मेडिकल सामाजिक कार्यकर्ताओं या मनोचिकित्सीय कार्यकर्ताओं को भेजे जाते हैं, समाज कार्य की सेवाओं की मान्यता का महत्वपूर्ण सूचक हैं।

ज) समाज कार्यकर्ता रोगी और उसके परिवार की अनुवर्ती (अर्थात् बाद में की जाने वाली) देखभाल व उपचार में शामिल हो जाते हैं ताकि उपचार के दौरान रोगी को जो लाभ (स्वास्थ्य सुधार) हुए थे वे लाभ बने रहें। आयुर्विज्ञान या मनोचिकित्सीय संस्थाओं में अनुवर्ती गतिविधियों के लिए जो रोगी व उनके परिवार के सदस्य ओ.पी.डी. में आते हैं अस्पताल से छुट्टी के बाद रोगियों द्वारा की गई प्रगति का निर्धारण करने के लिए वहाँ उनके साक्षात्कार के लिए जाते हैं। सी.जी.सी. में अनुवर्ती में अंतःक्षेप के परिणाम का पता लगाने के लिए समाज कार्यकर्ता बच्चों, उनके माता-पिता और रिश्तेदारों का साक्षात्कार लेते हैं, घरों व विद्यालयों के दौरे इत्यादि करते हैं।

झ) समाज कार्यकर्ता शिक्षण, पर्यवेक्षण और स्टाफ विकास की गतिविधियों से भी जुड़ा है। समाज कार्य की जानकारी प्रदान करने के लिए वह मेडिकल, समाज कार्य, फिज़ियोथैरेपी के साथ-साथ व्यावसायिक थैरेपी नर्सिंग इत्यादि सभी के विद्यार्थियों को स्नातक-पूर्व और स्नातकोत्तर स्तरों की शिक्षा देता है और इंटर्न विद्यार्थियों, समाज कार्यकर्ता (क्षेत्र कार्य के लिए) परावृत्तिकों, स्वयंसेवी जैसी व्यक्तियों का पर्यवेक्षण करता है। कर्मचारियों व समाज कार्यकर्ताओं के कार्य-निष्पादन को उत्तन करने के लिए वह अस्पताल में या अस्पताल से बाहर सेमिनारों, सम्मेलनों और कार्यशालाओं का आयोजन करता है।

ञ) रोगी के उपचार को जारी रखने, संगठनात्मक विकास और सामाजिक अनुसंधान के लिए नियमित रूप से बनाए जाने वाले रिकार्डों में स्पष्टता व वास्तविकता का होना महत्वपूर्ण है। भावी मार्गदर्शन व अनुसंधान कार्य के लिए इन केस रिकार्डों, पंजियों, फाइलों को बनाने व रखरखाव का दायित्व समाज कार्यकर्ताओं का होता है। यह पाया गया (वर्मा 1991) कि 87 प्रतिशत समाज कार्यकर्ता आजमाइशी तौर पर और 97 प्रतिशत समाज कार्यकर्ता नियमित रूप से रजिस्टर व केस-शीटें बनाते हैं। बहुत कम समाज कार्यकर्ता अर्थात् लगभग 12 प्रतिशत और 19 प्रतिशत क्रमशः अपनी प्रक्रिया रिकार्डों और संक्षिप्त रिकार्डों को अद्यतन करते हैं।

ट) अनुसंधान कार्य में अनुसंधान समस्या की रचना, प्राक्कल्पना के विकास, पद्धति एवं तकनीक का चयन, तथ्य संकलन तथ्य विश्लेषण से लेकर रिपोर्ट लिखने तक विभिन्न गतिविधियाँ (कार्यकलाप) शामिल हैं। यह देखा गया है कि कभी-कभी कार्यकर्ता को इन अनुसंधान कार्यों की प्रत्येक अवस्था में शामिल किया जाता है जो कि उनके कार्यों का ही हिस्सा होता है। लेकिन यह भी व्यावहारिक है कि कोई भी समाज कार्यकर्ता स्वतंत्र अनुसंधान कार्य नहीं करता। वे इसे सहायक कार्य मानते हैं।

ठ) 'मानसिक स्वास्थ्य आन्दोलन' को आगे बढ़ाने और 'अब सभी के लिए स्वास्थ्य' के प्रसार के लिए समाज कार्यकर्ता पत्रिकाओं में आने वाले लेखों, श्रव्य-दृश्य विधियों, रेडियो, टेलीविजन इत्यादि द्वारा समुदाय के साथ संपर्क बनाए रखते हैं।

ड) स्वास्थ्य देखभाल टीम से जुड़ा समाज कार्यकर्ता समुदाय आवासीय देखभाल प्रदाता के प्रवर्तक के रूप में भी काम करता है। वे लोग जिनके परिवार नहीं होते या जो परिवार घर पर व्यक्ति की देखभाल नहीं कर सकते या जो अस्पताल या नर्सिंग होम से संबंध नहीं रखता उन्हें सामुदायिक आवासीय देखभाल की ज़रूरत होती है।

ढ) उपरोक्त कार्यों के अतिरिक्त समाज कार्यकर्ता ज़रूरत पड़ने पर आपात कालों में भी जाता है। आपात काल दो प्रकार के होते हैं – चिकित्सा आपात काल और सामाजिक आपातकाल। जल जाना, हृदय संबंधी समस्याएँ, जहर खा लेना, सदमा (आघात) इत्यादि सही मायने में चिकित्सा आपातकाल है। सामाजिक आपातकाल के अन्तर्गत बाल दुरुपयोग, पति/पत्नी द्वारा दुर्व्यवहार, वयस्क दुरुपयोग, बलात्कार इत्यादि मामले आते हैं। इस सभी की विशेषताएँ सामान्य होती हैं अर्थात् ये अकल्पित होते हैं, एकदम अचानक होते हैं, रोगी के जीवन को इससे खतरा होता है और रोगी व उनके परिवार इनके लिए तैयार नहीं होते। परिणामस्वरूप रोगियों व उनके परिवार वालों को अनिश्चितता, अनेकों सवालों विभिन्न भावों का सामना करना पड़ता है और स्थिति के प्रति अनुक्रिया की योजना बनाने की आवश्यकता होती है। इस संदर्भ में, समाज कार्यकर्ता अनिश्चितता के अंश

को कम करने और स्थिति को समझकर व उसे नियंत्रित करके सहायता प्रदान करता है।

सारांश.....

एक शताब्दी से समाज कार्य स्वास्थ्य देखभाल का हिस्सा है। इसने अस्पतालों, क्लिनिकों, पुनर्वास केन्द्रों, नर्सिंग होमों, स्वास्थ्य विभागों, स्वास्थ्य एजेंसियों इत्यादि जैसे विभिन्न स्वास्थ्य देखभाल क्षेत्रों में उल्लेखनीय योगदान दिया है। सामाजिक विकास प्रतिमान के अन्तर्गत सामाजिक विज्ञान और समाज कार्य में स्वास्थ्य, स्वास्थ्य देखभाल, व्यक्ति के रूप में रोगी, स्वास्थ्य के मनो-सामाजिक पहलुओं इत्यादि को पुनः परिभाषित किया गया है और इसी पुनःपरिभाषित ज्ञान ने इक्कीसवीं शताब्दी में स्वास्थ्य देखभाल के अन्तर्गत समाज कार्यकर्ता की क्षमता को सुदृढ़ किया है। अब समाज कार्यकर्ता जानते हैं कि व्यक्ति, परिवार और समुदाय के लिए बीमारियाँ अलग-अलग अर्थ रखती हैं। अतः स्वास्थ्य देखभाल टीम का सदस्य होने के नाते समाज कार्यकर्ता रोगियों, उनके परिवारों, अस्पताल के माहौल और प्रशासनिक व सामुदायिक मामलों पर समान महत्व देने का प्रयास करता है।

कुछ उपयोगी पुस्तकें

बनर्जी, डी. (1985), *हैल्थ एंड फैमली प्लानिंग सर्विसस इन इंडिया,* लोक पक्ष नई दिल्ली

बनर्जी, जी. आर (1968), *दी ट्यूबरकूलोसिस पेसेंट,* टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साईंसः मुम्बई।

बाजपेयी, पी.के. (1998), *सोशल वर्क पर्सपेक्टिवस ऑन हैल्थ,* रावत पब्लिकेशंसः नई दिल्ली।

डोपर, एस. एस. (1997), *सोशल वर्क इन हैल्थ केयर इन दी टवनटी फर्स्ट सेंचुरी,* सेज पब्लिकेशंस, नई दिल्ली।

पार्क, के. (1995), *प्रिवन्टीव एंड सोशल मेडिसन,* बनारसीदास भनोट, जबलपुर।

कादिर, आई. (1985), "हैलथ सर्विसस सिस्टम इन इंडियाः एन एक्सप्रेशन ऑफ सोसो-इकानामिक इनइक्वलटी", *सोशल एक्शन,* खंड 35, पृष्ठ 198 से 221

शाह, एल.पी. एवं शाह, एच., (1994), *ए हैन्डबुक ऑफ साइक्रियाट्री,* वोरा मेडिकल पब्लिकेशंस मुम्बई।

वर्मा, आर. (1991), *साइक्रियाट्रिक सोशल वर्क इन इंडिया,* सेज पब्लिकेशंस, नई दिल्ली।

वर्दे, एस. एम. (1987), (सोशल वर्क इन मेडिकल सेटिंग) *इनसाइकोलोपीडिया ऑफ सोशल वर्क इन इंडिया,* खंड III, पृष्ठ 172-178.

यस्सुदीन, सी.ए.के., (सम्पा.) (1991), *प्राइमरी हैल्थ केयर,* टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साईंसः मुम्बई।